अंक : 1, मार्च 2021

LEISA INDIA

लीज़ा इण्डिया

विशेष हिन्दी संस्करण

लीज़ा इण्डिया

विशेष हिन्दी संस्करण
मार्च 2021, अंक 1

यह अंक लीज़ा इण्डिया टीम के साथ मिलकर जी०ई०ए०जी० द्वारा प्रकाशित किया जा रहा है, जिसमें लीज़ा इण्डिया में प्रकाशित अंग्रेजी भाषा के कुछ मूल लेखों का हिन्दी में अनुवाद एवं संकलन है।

गोरखपुर एनवायरन्मेन्टल एक्शन ग्रुप
224, पुर्दिलपुर, एम०जी० कालेज रोड,
पोस्ट बाक्स 60, गोरखपुर- 273001
फोन : +91-551-2230004,
फैक्स : +91-551-2230005
ईमेल : geagindia@gmail.com
वेबसाइट : www.geagindia.org

ए.एम.ई. फाउण्डेशन
नं० 204, 100 फीट रिंग रोड, 3rd फेज़, 2nd ब्लाक,
3rd स्टेज, बनशंकरी, बैंग्लोर- 560085, भारत
फोन : +91-080-26699512,
+91-080-26699522
फैक्स :+91-080-26699410,
ईमेल : leisaindia@yahoo.co.in

लीज़ा इण्डिया
लीज़ा इण्डिया अंग्रेजी में प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका है, जो इलिया की सहभागिता से ए.एम.ई. फाउण्डेशन बैंग्लोर द्वारा प्रकाशित होती है।

मुख्य सम्पादक
के.वी.एस. प्रसाद, ए.एम.ई. फाउण्डेशन

प्रबन्ध सम्पादक
टी.एम.राधा., ए.एम.ई. फाउण्डेशन

अनुवाद समन्वय
अर्चना श्रीवास्तव, जी.ई.ए.जी.
वीणा, ए.एम.ई. फाउण्डेशन

प्रबन्धन
रूक्मिणी जी.जी., ए.एम.ई. फाउण्डेशन

लेआउट एवं टाईपसेटिंग
राजकान्ती गुप्ता, जी.ई.ए.जी.

छपाई
कस्तूरी ऑफसेट, गोरखपुर

आवरण फोटो
जी०ई०ए०जी०

लीज़ा पत्रिका के अन्य सम्पादन
लैटिन, अमेरिकन, पश्चिमी अफ्रीकन एवं ब्राज़ीलियन संस्करण

लीज़ा इण्डिया पत्रिका के अन्य क्षेत्रीय सम्पादन
तमिल, कन्नड़, उड़िया, तेलगू, मराठी एवं पंजाबी

सम्पादक की ओर से लेखों में प्रकाशित जानकारी के प्रति पूरी सावधानी बरती गई है। फिर भी दी गई जानकारी से सम्बन्धित किसी भी त्रुटि की जिम्मेदारी उस लेख के लेखक की होगी।
माइजेरियर के सहयोग एवं जी०ई०ए०जी० के समन्वयन में ए०एम०ई० द्वारा प्रकाशित

लीज़ा

कम बाहरी लागत एवं स्थायी कृषि पर आधारित लीजा उन सभी किसानों के लिए एक तकनीक और सामाजिक विकल्प है, जो पर्यावरण सम्मत विधि से अपनी उपज व आय बढ़ाना चाहते हैं क्योंकि लीज़ा के अन्तर्गत मुख्यतः स्थानीय संसाधनों और प्राकृतिक तरीकों को अपनाया जाता है और आवश्यकतानुसार ही बाह्य संसाधनों का सुरक्षित उपयोग किया जाता है।

लीज़ा पारम्परिक और वैज्ञानिक ज्ञान का संयोग है, जो विकास के लिए आवश्यक वातावरण तैयार करता है। यह भी मुख्य है कि इसके द्वारा किसानों की क्षमता को विभिन्न तकनीकों से मजबूत किया जाता है और खेती को बदलती जरूरतों और स्थितियों के अनुकूल बनाया जाता है, साथ ही उन महिला एवं पुरुष किसानों व समुदायों का सशक्तिकरण होता है, जो अपने ज्ञान, तरीकों, मूल्यों, संस्कृति और संस्थानों के आधार पर अपना भविष्य बनाना चाहते हैं।

ए.एम.ई. फाउण्डेशन, डक्कन के अर्द्धशुष्क क्षेत्र के लघु सीमान्त किसानों के बीच विकास एजेन्सियों के जुड़ाव, अनुभव के प्रसार, ज्ञानवर्द्धन एवं विभिन्न कृषि विकल्पों की उत्पत्ति द्वारा पर्यावरणीय कृषि को प्रोत्साहित करता है। यह कम लागत प्राकृतिक संसाधन प्रबन्धन के लिए पारम्परिक ज्ञान व नवीन तकनीकों के सम्मिश्रण से आजीविका स्थाईत्व को बढ़ावा देता है।

ए.एम.ई. फाउण्डेशन गांव में इच्छुक किसानों के समूह को वैकल्पिक कृषि पद्धति तैयार करने व अपनाने में सक्षम बनाने हेतु उनके साथ जुड़कर सघन रूप से काम कर रही है। यह स्थान अभ्यासकर्ताओं व प्रोत्साहकों के लिए उनकी देखने–समझने की क्षमता में वृद्धि करने हेतु सीखने की परिस्थिति के तौर पर है। इससे जुड़ी स्वयं सेवी संस्थाओं और उनके नेटवर्क को जानने के लिए इसकी वेबसाईट देखें–(www.amefound.org)

गोरखपुर एनवायरन्मेन्टल एक्शन ग्रुप एक स्वैच्छिक संगठन है, जो स्थाई विकास और पर्यावरण से जुड़े मुद्दों पर सन् 1975 से काम कर रहा है। संस्था लघु एवं सीमान्त किसानों, आजीविका से जुड़े सवालों, पर्यावरणीय संतुलन, लैंगिक समानता तथा सहभागी प्रयास के सिद्वान्तों पर सफलतापूर्वक कार्य कर रही है। संस्था ने अपने 40 साल के लम्बे सफर के दौरान अनेक मूल्यांकनों, अध्ययनों तथा महत्वपूर्ण शोधों को संचालित किया है। इसके अलावा अनेक संस्थाओं, महिला किसानों तथा सरकारी विभागों का आजीविका और स्थाई विकास से सम्बन्धित मुद्दों पर क्षमतावर्धन भी किया है। आज जी0ई0ए0जी0 ने स्थाई कृषि, सहभागी प्रयास तथा जेण्डर जैसे विषयों पर पूरे उत्तर भारत में अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है। इसकी वेबसाईट देखें–(www.geagindia.org)

माइजेरियर वर्ष 1958 में स्थापित जर्मन कैथोलिक बिशप की संस्था है, जिसका गठन विकासात्मक सहयोग के लिए हुआ था। पिछले 50 वर्षों से माइजेरियर अफ्रीका, एशिया और लातिन अमेरिका में गरीबी के विरूद्ध लड़ने के लिए प्रतिबद्ध है। जाति, धर्म व लिंग भेद से परे किसी भी मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए यह हमेशा तत्पर है। माइजेरियर गरीबी और हानियों के विरूद्ध पहल करने के लिए प्रेरित करने में विश्वास रखता है। यह अपने स्थानीय सहयोगियों, चर्च आधारित संगठनों, गैर सरकारी संगठनों, सामाजिक आन्दोलनों और शोध संस्थानों के साथ काम करने को प्राथमिकता देता है। लाभार्थियों और सहयोगी संस्थाओं को एक साथ लेकर यह स्थानीय विकासात्मक क्रियाओं को साकार करने और परियोजनाओं को क्रियान्वित करने में सहयोग करता है। यह जानने के लिए कि स्थिर चुनौतियों की प्रतिक्रिया में माइजेरियर किस प्रकार अपनी सहयोगी संस्थाओं के साथ काम कर रहा है। इसकी वेबसाइट देखें (www.misereor.de; www.misereor.org)

भूमि सुधा : मृदा उर्वरता को बढ़ाने के लिए बायोमॉस का पुनर्चक्रीकरण

विकास दास, प्रदीप कुमार सरकार, महेश कुमार धाकर, सुशान्ता कुमार नायक, सुदर्शन मौर्या, प्रिय रंजन कुमार, शिवेन्द्र कुमार, अरूण कुमार सिंह एवं बी.पी. भट्ट

झारखण्ड में खूंटी और रांची जिलों के किसान अपने फलों के बगीचों में बायोमॉस पैदा करने वाले पौधों को शामिल कर लाभान्वित हो रहे हैं। पौधों की नालियों में बायोमॉस की मल्चिंग करने से मृदा नमी, मृदा पोषण एवं जीवाश्मों की मात्रा में उल्लेखनीय वृद्धि पायी गयी है, जो पौधों की बढ़त एवं उपज में वृद्धि के रूप में प्रदर्शित होती है।

अनुक्रमणिका

विशेष हिन्दी संस्करण, मार्च 2021

5 **भूमि सुधा : मृदा उर्वरता को बढ़ाने के लिए बायोमॉस का...........**
विकास दास, प्रदीप कुमार सरकार, महेश कुमार धाकर, सुशान्ता कुमार नायक, सुदर्शन मौर्या, प्रिय रंजन कुमार, शिवेन्द्र कुमार, अरूण कुमार सिंह एवं बी.पी. भट्ट

9 **स्थाई खेत, स्थाई भविष्य**
वाई.एम.एम. सिरकर एवं देबाशीष मोहापात्रा

12 **खेत से उच्च उत्पादन पाने के लिए जैविक**
एम.एच. मेहता

15 **छोटे–छोटे नवाचारों ने खेती बनाई लाभप्रद**
अर्चना श्रीवास्तव, अजय कुमार सिंह एवं रामसूरत

17 **हरित भारत के लिए हरित उत्सव**
एम.एन. कुलकर्णी

स्थाई खेत, स्थाई भविष्य

वाई.एम.एम. सिरकर एवं देबाशीष मोहापात्रा

एक छोटे से सहयोग के साथ पारम्परिक के स्थान पर जैविक पद्धति से खेती करना संभव है। इस बात को उड़ीसा के एक आदिवासी किसान गोलपी की कहानी ने सिद्ध किया है। गोलपी न केवल कपास की जैविक खेती करने वाली एक किसान हैं, वरन् ये अन्य फसलों में खेती के पारिस्थितिकी तरीके को अपनाते हुए अपने खेत की स्थिरता को बढ़ा रही हैं।

खेत से उच्च उत्पादन पाने के लिए जैविक

एम.एच. मेहता

खेती में लगने वाली लागत को कम करने और एक स्थाई तरीके से उत्पादकता को बढ़ाने की नितान्त आवश्यकता है। ऐसे लक्ष्य को पूरा करने हेतु किसानों की मदद से नये प्रकार के कृषि–जैव निवेशों का उपयोग करते हुए 20 : 20 मॉडलों को तैयार किया जा सकता है। जैव–रसायनों एवं जैविक कीटनाशकों के साथ कृषि अपशिष्टों से तैयार वैज्ञानिक जैविक खाद ने पर्यावरणसम्मत तरीके एवं न्यूनतम लागत पर खेत की उत्पादकता को उन्नत बनाने की क्षमता को प्रदर्शित किया है।

छोटे–छोटे नवाचारों ने खेती बनाई लाभप्रद

अर्चना श्रीवास्तव, अजय कुमार सिंह एवं रामसूरत

छोटी व सीमान्त जोत पर खेती करने वाली महिला किसानों ने खेती की अन्तःफसली तकनीक में छोटे–छोटे नवाचारों को अपनाकर न सिर्फ अपनी मुख्य फसल से होने वाली आय को दुगुना किया है, वरन् खेती में लगने वाली लागत में भी कमी की है। पश्चिमी चम्पारण के नौतन प्रखण्ड की किसान छठिया देवी ने इस सफलता को बखूबी दर्शाया है।

हरित भारत के लिए हरित उत्सव

एम.एन. कुलकर्णी

हसीरूहब्बा जैसे पौधरोपण उत्सवों का आयोजन करने के माध्यम से सामुदायिक सहयोग के साथ पौधरोपण की संस्कृति को ग्रामीण जीवन शैली में समाहित किया जाता है।

यह अंक...

सम्पादकीय

तमाम उतार–चढ़ावों को झेलते हुए मार्च, 2021 का लीज़ा इण्डिया हिन्दी अंक आपके समक्ष प्रस्तुत है। बदलती परिस्थितियों के सन्दर्भ में जैविक एवं स्थाई खेती आज की आवश्यक आवश्यकता हो गयी है। यद्यपि पूरे भारत में सभी क्षेत्रों के छोटे–मझोले व महिला किसानों द्वारा जैविक खेती से जुड़े प्रयास किये जा रहे हैं, जो सफल भी हैं, परन्तु अभी भी उनका प्रसार बड़े पैमाने पर होना बाकी है। यह एक विचारणीय प्रश्न है कि तमाम सरकारी, गैर सरकारी प्रयासों के बावजूद अभी भी जैविक खेती को वह मान्यता एवं पहचान नहीं मिल पा रही है, जिसकी वह हकदार है। यह कहा जा सकता है कि जैविक विधाओं / खेती के क्रियान्वयन में पूरी ईमानदारी नहीं बरती जा रही है। बहरहाल, समुदाय के स्तर पर देखा जाये तो किसानों द्वारा छिट–पुट किये जा रहे प्रयास सराहनीय हैं, जिन्हें लीज़ा इण्डिया पत्रिका के माध्यम से बड़े पैमाने पर प्रसारित करने की एक मुहिम सालों से चलायी जा रही है।

पत्रिका का पहला लेख ''भूमि सुधा : मृदा उर्वरता को बढ़ाने के लिए बायोमॉस का पुनर्चक्रीकरण'' है, जिसे विकास दास, प्रदीप कुमार सरकार, महेश कुमार धाकर, सुशान्ता कुमार नायक, सुदर्शन मौर्या, प्रिय रंजन कुमार, शिवेन्द्र कुमार, अरूण कुमार सिंह एवं बी पी भट्ट ने मिलकर लिखा है। इस लेख के माध्यम से लेखकगणों ने बताया है कि मृदा उर्वरता को बढ़ाने के लिए झारखण्ड में खूंटी और रांची जिलों के किसान अपने फलों के बगीचों में बायोमॉस पैदा करने वाले पौधों को शामिल कर लाभान्वित हो रहे हैं। वाई एम सिरकर एवं देबाशीष मोहापात्रा द्वारा लिखित ''स्थाई खेत स्थाई भविष्य'' नामक लेख पत्रिका का दूसरा लेख है। इस लेख में लेखक द्वय ने अपने अनुभवों के आधार पर बताया है कि कैसे एक छोटे से सहयोग के साथ पारम्परिक के स्थान पर जैविक पद्धति से खेती करना संभव है। इसे उन्होंने उड़ीसा के एक आदिवासी किसान गोलपी की कहानी के माध्यम से बताया है जो न केवल कपास की जैविक खेती कर रही हैं, वरन् ये अन्य फसलों में खेती के पारिस्थितिकी तरीके को अपनाते हुए अपने खेत की स्थिरता को भी बढ़ा रही हैं।

''खेत से उच्च उत्पादन पाने के लिए जैविक'' नामक पत्रिका के तीसरे लेख को एम.एच. मेहता ने लिखा है। इस लेख के माध्यम से लेखक ने यह बताने का प्रयास किया है कि गुजरात में सामाजिक संगठन, कृषि विश्वविद्यालय एवं बायोटेक कम्पनी तीनों ने मिलकर जैविक खेती को प्रोत्साहित करने हेतु विभिन्न स्तरों पर काम किया। इन्होंने यह भी महसूस किया कि खेती में लगने वाली लागत को कम करने और एक स्थाई तरीके से उत्पादकता को बढ़ाने की नितान्त आवश्यकता है। ऐसे लक्ष्य को पूरा करने हेतु किसानों की मदद से नये प्रकार के कृषि–जैव निवेशों का उपयोग करते हुए 20 : 20 मॉडलों को तैयार किया जा सकता है। अर्चना श्रीवास्तव, अजय कुमार सिंह एवं रामसूरत द्वारा लिखा गया ''छोटे–छोटे नवाचारों ने खेती बनाई लाभप्रद'' पत्रिका का चौथा लेख है। इस लेख में लेखकगणों ने पश्चिमी चम्पारण के नौतन प्रखण्ड की महिला किसान छठिया देवी की कहानी बताई है जिन्होंने अन्तःखेती में छोटे–छोटे नवाचारों को अपनाकर आलू व मक्का की खेती को लाभप्रद बनाया है।

पत्रिका का अन्तिम लेख ''हरित भारत के लिए हरित उत्सव'' है, जिसे एम.एन. कुलकर्णी द्वारा लिखा गया है। इस लेख में उन्होंने बताया है कि सभी को स्वस्थ तथा पर्यावरण को स्वच्छ रहने के लिए पौधरोपण करना एवं उनकी देखभाल करना आवश्यक है। लेकिन यदि इसे सामुदायिक सहभागिता से सम्पन्न किया जाये तो उसके अधिक सार्थक परिणाम निकलेंगे। इस सोच को ध्यान में रखते हुए कर्नाटक में बाएफ ने हसीरूहब्बा जैसे पौधरोपण उत्सवों का आयोजन करने के माध्यम से सामुदायिक सहयोग के साथ पौधरोपण की संस्कृति को ग्रामीण जीवन शैली में समाहित करने की कवायद की है।

अन्त में, पत्रिका में शामिल लेखों एवं उनकी उपयोगिता पर आपके सुझावों एवं विचारों की प्रतीक्षा में.....

• सम्पादक मण्डल

भूमि सुधा
मृदा उर्वरता को बढ़ाने के लिए बायोमॉस का पुनर्चक्रीकरण

विकास दास, प्रदीप कुमार सरकार, महेश कुमार धाकर, सुशान्ता कुमार नायक, सुदर्शन मौर्या, प्रिय रंजन कुमार, शिवेन्द्र कुमार, अरुण कुमार सिंह एवं बी.पी. भट्ट

झारखण्ड में खूंटी और रांची जिलों के किसान अपने फलों के बगीचों में बायोमॉस पैदा करने वाले पौधों को शामिल कर लाभान्वित हो रहे हैं। पौधों की नालियों में बायोमॉस की मल्चिंग करने से मृदा नमी, मृदा पोषण एवं जीवाश्मों की मात्रा में उल्लेखनीय वृद्धि पायी गयी है, जो पौधों की बढ़त एवं उपज में वृद्धि के रूप में प्रदर्शित होती है।

भारत के पूर्वी पठार एवं पहाड़ी क्षेत्र बड़े पैमाने पर फलदार फसलों की खेती सफलतापूर्वक करने हेतु उपयुक्त जलवायुविक परिस्थितियां प्रदान करते हैं। यद्यपि इन क्षेत्रों में पर्याप्त वर्षा होने के कारण, मृदा में जैविक कार्बन की कमी, मृदा की खराब जलधारण क्षमता, अम्लीय मृदा एवं फासफोरस, बोरान एवं जिंक जैसे पोषक तत्वों की कमी आदि की समस्याएं उत्पन्न होती हैं, जिससे विशेषकर वर्षा की स्थितियों में विभिन्न फलदार फसलों की वृद्धि और उत्पादकता पर दुष्प्रभाव पड़ता है। इन उष्णकटिबंधीय वातावरण में अधिकाँशतः मिट्टी में उच्च अम्लता और एल्यूमिनियम विषाक्तता है और यहाँ की मिट्टी में आक्साइड प्रचुर मात्रा में तथा पोषक तत्वों की कमी पायी जाती है। इसलिए, यहां पर कृषिगत उत्पादन लागत का एक बड़ा हिस्सा चूना और रसायनिक उर्वरकों पर व्यय होता है।

इस क्षेत्र में मृदा में कार्बनिक कार्बन सामग्री की मात्रा बढ़ाने की दिशा में फलदार फसलों की उत्पादकता बढ़ाने हेतु कोई भी प्रयास करना प्रमुखता से होना चाहिए। उष्ण कटिबन्धीय आर्द्र और उप आर्द्र क्षेत्रों में मृदा में सड़न की प्रक्रिया देर से होने के कारण मृदा में कार्बनिक तत्वों में यथास्थिति बनाये रखना या सुधार करना एक प्रमुख चुनौती है। मृदा में कार्बनिक तत्वों की कमी से निपटने तथा समग्र रूप से मृदा गुणवत्ता बढ़ाने के लिए मिट्टी की कम जुताई एवं पौध अपशिष्टों के उच्च निवेश का संयुक्त कृषिगत प्रणाली एक प्रभावी विकल्प है। हाल के वर्षों में कार्बनिक खाद की लागत बढ़ने के कारण खेतों में इनका

बायोमॉस के साथ मल्चिंग करने से मृदा नमी, मृदा पोषण एवं कार्बनिक सामग्रियों में वृद्धि होती है

प्रयोग धीरे–धीरे कम होता जा रहा है। भारत के पूर्वी पठारी क्षेत्रों के किसान अपने खेतों में आसानी से उपलब्ध होने वाले कार्बनिक खादों का उपयोग करते हैं और अपने फलों के बगीचे में तो वे कार्बनिक खादों का उपयोग बहुत कम ही करते हैं। हालांकि बगीचों के लिए हरी खाद वाली फसलों जैसे ढैंचा को सिर्फ बारिश के दिनों में ही उगाये जाने के कारण फलदार बगीचों के लिए उनका उत्पादन चक्र एक प्रमुख बाधा है। ठीक इसी प्रकार, अकार्बनिक उर्वरकों के लागत बढ़ते रहने के कारण, अधिकाँश छोटी जोत वाले किसानों द्वारा उसका प्रयोग पर्याप्त मात्रा में नहीं किया जा पाता और यही कारण है कि एकीकृत मृदा उर्वरता प्रबन्धन प्रणाली विकसित करने के प्रति उनकी रूचि बढ़ी है।

फसल प्रणालियों में बायोमॉस उत्पादित करने वाले पौधे

मृदा की उर्वरता में सुधार लाने के लिए मुख्य फसल के लिए पत्तेदार बायोमॉस के अलावा फसल उत्पादन प्रणाली में बायोमॉस उपजाने वाले पौधों को समाहित करना काफी प्रभावी पाया गया है। मेड़ों पर खेती प्रणाली में बायोमॉस उत्पादित करने वाली प्रजातियों की उपस्थिति से पोषण पुनर्चक्रीकरण, मृदा में पोषण के रिसाव में कमी, मृदा में उच्च जैविक गतिविधियों को प्रोत्साहित करने, मृदा क्षरण को रोकने, मृदा उर्वरता को बढ़ाने तथा फसल उत्पादकता का स्तर स्थाई बनाये रखने में सहयोग प्राप्त होता है। मेड़ों पर खेती प्रणाली आधारित पोषण पुनर्चक्रीकरण की सफलता पेड़ों से छंटनी की गयी सामग्रियों की मात्रा और गुणवत्ता, अपघटन प्रक्रिया के दौरान अपशिष्टों से निकले पोषणों की मात्रा तथा उत्सर्जित पोषण एवं फसल की आवश्यकता के बीच सामंजस्य पर निर्भर करती है। मिट्टी की गहराई से पोषण लेने की क्रिया में वृद्धि करने हेतु गहरी जड़ प्रणाली के साथ दलहनी पौधों का रोपण, नाइट्रोजन स्थिरीकरण करते हुए नाइट्रोजन का निवेश आदि पर विचार करना खेत पर पोषण चक्र को उन्नत बनाने के लिए एक सर्वाधिक प्रभावी तरीका है। अधिकाँश कृषि–वानिकी प्रणाली अपने बायोमॉस में फासफोरस को जमा करते हैं और जब वे विघटित होते हैं तो मृदा को वही फासफोरस पुनः वापस कर देते हैं। चक्रीकरण के माध्यम से, फासफोरस की कम उपलब्धता वाले कुछ अकार्बनिक रूपों को संभावित उपलब्ध रूपों में मृदा में बदल दिया जाता है।

भूमिसुधा : एक संभावित बायोमॉस उपज पौध

यह देखा गया है कि मृदा के पोषक तत्वों के पुनर्चक्रीकरण में बायोमॉस उपजाने वाले कई बारहमासी पौधे काफी प्रभावकारी होते हैं। सुबबूल के पौधों का मेड़ों पर रोपण उप आर्द्र उप उष्णकटिबन्धीय क्षेत्रों के अन्तर्गत एक सामान्य तौर पर प्रयोग में लायी जाने वाली प्रणाली है। हालांकि, मेड़ों पर खेती प्रणाली में एकीकरण के लिए सुबबूल के लिए प्रभावी विकल्प के तौर पर आक्रामक प्रकृति की प्रजातियों की पहचान में कई दिक्कतें भी उत्पन्न होती हैं।

सुबबूल के विकल्प की पहचान करने के लिए वर्ष 2014 से लगातार, आईसीएआर आरसीईआर, शोध केन्द्र, रांची द्वारा बहुत सारे किसानों के साथ मिलकर सहभागी अध्ययन किय गये हैं। कई जिलों जैसे– रांची, खूंटी व रामगढ़ में इन अध्ययनों को प्रयोग–कम–प्रदर्शन के तरीके

भूमिसुधा से बेल के पेड़ की मल्चिंग

कुल्थी मूलतः भारत में हिमालयन क्षेत्र के उष्ण कटिबंधीय क्षेत्र की फसल हैं। इसकी खेती प्राकृतिक रूप से होती है और पूरे दक्षिण—पूर्वी एशिया में विभिन्न उपयोगों के लिए इसकी खेती की जाती है। इसका औषधीय उपयोग भी है। अपने उच्च बायोमॉस उत्पादन, सघन वानस्पतिक आवरण, गहरी जड़ प्रणाली, गैर—आक्रामक प्रकृति के साथ ही नाइट्रोजन स्थिरीकरण क्षमता के कारण कृषि—वानिकी के लिए यह एक उचित प्रजाति है। बज्रदन्ती और कुल्थी कुछ ऐसी वनस्पतियां हैं, जिनका उपयोग अफ्रीकन देशों में पहले से ही उर्वरक के तौर पर किया जाता है। उसर भूमि को उर्वर बनाने तथा मृदा में कार्बनिक पदार्थों के स्तर में वृद्धि के साथ ही नाइट्रोजन, फासफोरस एवं पोटैशियम की मात्रा को बढ़ाने के लिए वृक्ष उपयोगी होते हैं।

से किसानों के खेतों पर भी सम्पन्न किया गया। निरीक्षणों के आधार पर, फलदार बगीचों में बायोमॉस के पोषण पुनचक्रीकरण के लिए भूमि सुधा की पहचान एक प्रभावी विकल्प के तौर पर की गयी है।

फलदार फसलों में पोषण पुनर्चक्रीकरण पर मॉडल

प्रयोग के पाँच वर्षों में प्राप्त आँकड़ों के ऊपर काम करने के बाद, भारत के पूर्वी पठारी एवं पहाड़ी क्षेत्रों के लिए, बेल अथवा श्रीफल पर उत्पादन प्रणाली आधारित एक मॉडल विकसित किया गया। इस मॉडल का दृष्टिकोण वृक्षों की लाइनों के बीच भूमि सुधा पौधों को उगाकर उनसे बायोमॉस लेना था ताकि पोषण पुनर्चक्रीकरण के माध्यम से पौधों की जड़ों को समृद्ध किया जा सके।

इस मॉडल में, बेल के पौधों की रोपाई एक निश्चित दूरी पर की गयी। पौध से पौध के बीच की दूरी 2.5 मीटर तथा लाइन से लाइन के बीच की दूरी 5.0 मीटर रखी गयी। दो लाइनों के बीच 3.0 मीटर चौड़ी पट्टियों पर बीजों का अंकुरण कराकर भूमिसुधा के पौधे उगाये गये। भूमिसुधा के बीजों की बुवाई जुलाई में लाइन से की गयी और पौध से पौध की दूरी 15 सेमी0 तथा लाइन से लाइन की दूरी 30 सेमी0 रखी गयी। भूमि सुधा से एक वर्ष में दो बार टहनियों की कटाई—छंटाई की जा सकती है, जिसे बेल के पौधे की मल्चिंग के लिए उपयोग किया जा सकता है। भूमि सुधा और सुबबूल के बीच की गयी तुलना से प्रदर्शित होता है कि उपज और पोषण सामग्री की दृष्टि से भूमि सुधा सुबबूल से ज्यादा बेहतर है (देखें— तालिका नं0 1)।

उत्तक में प्राप्त पोषक तत्वों के आधार पर, भूमि सुधा के माध्यम से बेल की जड़ों के लिए पहले तीन वर्षों के पोषक तत्वों को पुनर्चक्रीकृत करते हुए प्रति हेक्टेयर के हिसाब से 1.17 टन नाइट्रोजन, 0.06 टन फासफोरस एवं 0.42 टन पोटैशियम को पुनर्चक्रीकृत किया जा सकता है। जबकि सुबबूल से प्रति हेक्टेयर 0.41 टन नाइट्रोजन, 0.03 टन फासफोरस एवं 0.16 टन पोटैशियम को बायोमॉस के माध्यम से पुनर्चक्रीकृत किया जाता है। आर्थिक दृष्टि से देखा जाये तो प्रारम्भिक तीन वर्षों के दौरान प्रति हेक्टेयर क्रमशः रू0 23400.00, रू0 23600.00 एवं रू0 25200.00 के मूल्य के नाइट्रोजन, फासफोरस और पोटैशियम को भूमि सुधा के बायोमॉस के माध्यम से पुनर्चक्रीकरण किया गया।

तालिका 1: भूमि सुधा और सुबबूल के बीच तुलनात्मक अध्ययन

क्र.	मानक	भूमि सुधा	सुबबूल
1.	सूखा बायोमॉस उपज (टन/हेक्टयर में)	12.8	10.2
2.	पोषक तत्व (प्रतिशत में)		
	नाइट्रोजन	2.94	2.94
	फास्फोरस	0.24	0.24
	पोटाश	1.06	1.16
3.	सूक्ष्म पोषक तत्व (पी0पी0एम0)		
	जिंक	35.35	39.97
	कॉपर	19.18	14.07
	मैग्नीशियम	177.60	79.54
	आयरन	203.20	159.07

मल्चिंग के प्रभाव

बेल के पौधे की जड़ों में भूमि सुधा के बायोमॉस की मल्चिंग करने से मृदा में उपलब्ध पोटैशियम तत्वों एवं कार्बनिक कार्बन में उल्लेखनीय वृद्धि पायी गयी तथा तीन वर्षों के बाद मृदा की सघनता में कमी आयी अर्थात् मिट्‌टी का भुरभुरापन बढ़ गया। मिट्‌टी का कड़ापन खत्म होने से मृदा नमी तथा कार्बनिक तत्वों में वृद्धि हुई, जिससे पौधों की जड़ों को गहराई तक जाने में मदद मिली। इसी तरह खूंटी और रांची जिलों में शरपुंखी अथवा कुल्थी की पत्तियों एवं टहनियों की छंटाई कर उसकी मल्चिंग करने से आम के बगीचों को लाभान्वित किया गया। खूंटी जिले के टोरपा विकासखण्ड के गुफ्फू गाँव में रहने वाली बिमला देवी वर्ष 2014 में सबसे पहली अपनाने वाली महिला थीं। जबकि आज टोरपा विकासखण्ड एवं उसके निकटवर्ती विकासखण्ड मूरहू में एक स्वैच्छिक संगठन ''प्रदान'' के सहयोग से 20 से अधिक बगीचों में इस तकनीक का विस्तार हो गया है।

भूमि सुधा से उपजे बायोमॉस की मल्चिंग करने से पाँच वर्ष पुराने बेल के पेड़ में भी पौध विकास के विभिन्न मानकों जैसे तना की मोटाई, पेड़ की ऊँचाई, छाया विस्तार एवं उपज में वृद्धि हुई है। आम के एक बगीचे में भूमि सुधा से प्राप्त बायोमॉस से आम्रपाली प्रजाति के पौधों की मल्चिंग लगातार दो वर्ष तक करने के परिणामस्वरूप पौधों की मजबूती बढ़कर 10 वर्ष पुराने आम के वृक्ष के बराबर हो सकती है। यद्यपि गाँव वालों के पास प्रभावों को मापने की कोई विधि नहीं है और वे अनुभवों के आधार पर पत्तों पर पड़ने वाले प्रभावों को देखने के साथ ही फलों की उपज एवं गुणवत्ता के आधार पर इसका आकलन

करते हैं। एक स्पष्ट प्रमाण यह हो सकता है कि पड़ोसी किसानों एवं आस–पास के क्षेत्रों से लोगों द्वारा भूमिसुधा के बीजों की निरन्तर मांग की जाती है। कोई आश्चर्यजनक बात नहीं है कि इसे स्थानीय स्तर पर एक ''मेंड़ गाछ'' अर्थात् ''खाद पौधा'' के रूप में जाना जाये। ''प्रदान'' ने इस पद्धति को विस्तारित करने का जो सरल तरीका अपनाया, उससे उम्मीद है कि इस क्षेत्र में यह तकनीक एक बड़े अभ्यास के तौर पर सामने आयेगी।

कोयला खनन प्रभावित क्षेत्रों में कुल्थी के माध्यम से भूमि सुधार

खनन के बाद बहुत बड़ा क्षेत्र बंजर छूट गया था, उसे पुनः बसाने और सुधार करने के लिए कहा गया। वानिकी एवं फलदार वृक्षों को रोपित किया गया और पेड़ों के बीच के स्थानों तथा मेड़ों पर कुल्थी के पौधों को लगाने हेतु किसानों को प्रोत्साहित किया गया। सबसे पहले वर्ष 2014 में रामगढ़ जिले के फुसरी गाँव में श्री सुनील मुर्मू के एक हेक्टेयर खेत के चारों तरफ मेड़ों पर कुल्थी को लगाया गया। अब, अन्य दूसरे किसान इसे अपना रहे हैं और पेड़ों की दो लाइनों के बीच में भी इसे लगाया जा रहा है। वे इसे जानवरों एवं बकरियों के चारे के विकल्प के तौर पर भी उपयोग में ला रहे हैं।

निष्कर्ष

फलदार बगीचों में वृक्षों की दो लाइनों के बीच में भूमि सुधा जैसे बायोमॉस उत्पादित करने वाले पौधों का एकीकरण कर यह पाया गया कि फलदार पौधों के विकास एवं उपज को उन्नत बनाने के लिए यह एक प्रभावी तरीका है। हालांकि, आईसीएआर आरसीईआर, आर सी, रांची में किये गये अध्ययन यह संकेत देते हैं कि पाँच वर्ष बाद भूमि सुधा के पौधे खत्म हो जाते हैं और प्रत्येक पाँच वर्ष बाद इसे पुनः बुवाई करने की आवश्यकता होती है। इन पौधों के उन्मूलन हो जाने के बाद आवश्यकता पड़ने पर सुबबूल एक प्रभावी विकल्प है। आईसीएआर आरसीईआर, आर सी, रांची द्वारा किसानों के बीच वितरित करने हेतु भूमि सुधा के बीजों को उत्पादित किया जाता है और झारखण्ड में बड़ी संख्या में किसान भूमि सुधा को अपने बगीचों में बो रहे हैं। प्रसार अभिकरणों के माध्यम से, समुचित एडवोकेसी करते हुए, फलदार बगीचे की उत्पादकता को उन्नत बनाने के लिए बड़े पैमाने पर इस पौधे का उपयोग किया जा सकता है।

■

प्रिय रंजन कुमार
पूर्वी क्षेत्र के लिए आई.सी.ए.आर. रिसर्च काम्प्लेक्स
रांची, झारखण्ड– 834 010 (भारत)
ईमेल : ourprk@gmail.com

Recycling resources in agroecology farms
LEISA INDIA, Vol. 21, No.2, June 2019

Issues and Themes of LEISA INDIA Published in English 2002-2018

V.5, No. 1, 2003 - Farmers Field School
V.5, No. 2, 2003 - Ways of water harvesting
V.5, No. 3, 2003 - Access to resources
V.5, No. 4, 2003 - Reversing Degradation

V.6, No. 1, 2004 - Valuing crop diversity
V.6, No. 2, 2004 - New generation of farmers
V.6, No. 3, 2004 - Post harvest Management
V.6, No. 4, 2004 - Farming with nature

V.7, No. 1, 2005 - On Farm Energy
V.7, No. 2, 2005 - More than Money
V.7, No. 3, 2005 - Contribution of Small Animals
V.7, No. 4, 2005 - Towards Policy Change

V.8, No. 1, 2006 - Documentation for Change
V.8, No. 2, 2006 - Changing Farming Practices
V.8, No. 3, 2006 - Knowledge Building Processes
V.8, No. 4, 2006 - Nurturing Ecological Processes

V.9, No. 1, 2007 - Farmers Coming together
V.9, No. 2, 2007 - Securing Seed Supply
V.9, No. 3, 2007 - Healthy Produce, People and Environment
V.9, No. 4, 2007 - Ecological Pest Management

V.10, No. 1, 2008 -Towards Fairer Trade
V.10. No. 2, 2008 - Living soils
V.10, No. 3, 2008 - Farming and Social Inclusion
V.10, No. 4, 2008 - Dealing with Climate Change

V.11, No. 1, 2009 - Farming Diversity
V.11, No. 2, 2009 - Farmers as Entrepreneurs
V.11, No. 3, 2009 - Women and Food Sovereignty
V.11, No. 4, 2009 - Scaling up and sustaining the gains

V.12, No.1, 2010 - Livestock for sustainable livelihoods
V.12, No.2, 2010 - Finance for farming
V.12, No.3, 2010 - Managing water for sustainable farming

V.13, No.1, 2011 - Youth in farming
V.13, No.2, 2011 - Trees and farming
V.13, No.3, 2011 - Regional Food System
V.13, No.4, 2011 - Securing Land Rights

V.14, No.1, 2012 - Insects as Allies
V.14, No.2, 2012 - Greening the Economy
V.14, No.3, 2012- Farmer Organisations
V. 14, No.4, 2012- Combating Desertification

V. 15, No.1, 2013- SRI: A scaling up success
V. 15, No.2, 2013- Farmers and market
V. 15, No.3, 2013- Education for change
V. 15, No.4, 2013- Strengthening family farming

V. 16, No. 1, 2014- Cultivating farm biodiversity
V. 16, No. 2, 2014- Family farmers breaking out of poverty
V. 16, No. 3, 2014- Family farmers and sustainable landscapes
V. 16, No. 4, 2014- Family farming and nutrition

V. 17, No. 1, 2015- Soils for life
V. 17, No. 2, 2015- Rural-urban linkages
V. 17, No. 3, 2015- Water-lifeline for livelihoods
V. 17, No. 4, 2015- Women forging change

V. 18, No. 1, 2016- Co-creation to knowledge
V. 18, No. 2, 2016- Valuing underutilised crops
V. 18, No. 3, 2016- Agroecology-Measurable and sustainable
V. 18, No. 4, 2016- Stakeholders in agroecology

V. 19, No. 1, 2017- Food Sovereignty
V. 19, No. 2, 2017- Climate Change and Ecological appraches
V. 19, No. 3, 2017- Ecological Livestock
V. 19, No. 4, 2017- Millet Farming Systems

V. 20, No. 1, 2018- Agroecological Value Chains
V. 20, No. 2, 2018- Biological Crop Management
V. 20, No. 3, 2018- Small Holders Farm Enterprises
V. 20, No. 4, 2018- Agroecological Innovations
Special Issue April 2018- Agroecology- A path towards SDGs

V. 21, No. 1, 2019- Sustainable Aquaculture
V. 21, No. 2, 2019- Recycling resources in agro ecological farms
V. 21, No. 3, 2019- Agroecology- The future of farming
V. 21, No. 4, 2019- Save the planet

स्थाई खेत, स्थाई भविष्य

वाई.एम.एम. सिरकर एवं देबाशीष मोहापात्रा

एक छोटे से सहयोग के साथ पारम्परिक के स्थान पर जैविक पद्धति से खेती करना संभव है। इस बात को उड़ीसा के एक आदिवासी किसान गोलपी की कहानी ने सिद्ध किया है। गोलपी न केवल कपास की जैविक खेती करने वाली एक किसान हैं, वरन् ये अन्य फसलों में खेती की पारिस्थितिकी तरीके को अपनाते हुए अपने खेत की स्थिरता को बढ़ा रही हैं।

कपास तोड़ती महिलाएं

लगभग 35 वर्ष की गोलपी इल्ला एक आदिवासी महिला हैं और उड़ीसा के रायगड़ा जिले के मुनिगुडा प्रखण्ड के बदमंजुर्कुपा गाँव में रहती हैं। इनकी शादी 17 वर्ष की उम्र में ही हो गयी थी और ये अपने 6 बच्चों व पति के साथ रहती हैं। इनकी आजीविका का मुख्य स्रोत खेती है और इनके पास अपना स्वयं का चार एकड़ खेत है। कुछ वर्षों पहले तक, इनका परिवार मुख्य रूप से पारम्परिक कृषि पर ही निर्भर करता था।

सिंचाई की सुविधाओं का अभाव होने के कारण यह खरीफ ऋतु में सिर्फ धान उगाती थीं। धान की कटाई के बाद खेत में पर्याप्त नमी रहने की स्थिति में कभी—कभी रबी ऋतु में भी कुछ फसलें उगा लेती थीं। बहुत बार बारिश न होने अथवा देर से बरसात होने के कारण धान की फसल भी नहीं हो पाती थी। सूखा की स्थितियों से निपटने हेतु इनके पास कोई व्यवस्था नहीं थी और तब इन्हें निकट के कस्बे अम्बादोला में कृषिगत मजदूरी करने के लिए मजबूर होना पड़ता था। बहुधा गोलपी के पति काम के तलाश में उड़ीसा से बाहर अन्य राज्यों में पलायन भी करते थे। इनके लिए 8 सदस्यों के परिवार के भरण—पोषण का प्रबन्ध करना काफी मुश्किल कार्य था।

जैविक सफर

वर्ष 2011 में, एक स्वयंसेवी संगठन चेतना जैविक ने जैविक खाद्य उत्पादन को प्रोत्साहित करने हेतु बदमंजुर्कुपा गाँव में अरहर की खेती के कार्यक्रम को शुरू किया। किसानों को चना की खेती करने के उन्नत तरीकों पर प्रशिक्षित किया गया। चना को मक्का की खेती में एक अन्तः खेती के तौर पर प्रोत्साहित किया गया। वर्ष 2013 में, महिला किसान सशक्तिकरण परियोजना कार्यक्रम का क्रियान्वयन किया गया। महिला किसान सशक्तिकरण परियोजना आजीविका संवर्धन और नाजुकता को कम करने के लिए भारत सरकार द्वारा चलाये जा रहे कार्यक्रम राष्ट्रीय आजीविका ग्रामीण मिशन का एक उप कार्यक्रम है। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य खेती में महिलाओं की सहभागिता एवं उत्पादकता बढ़ाने हेतु कृषि में व्यवस्थित निवेश करने के माध्यम से महिलाओं को सशक्त बनाना था साथ ही ग्रामीण महिलाओं के लिए स्थाई कृषि आधारित आजीविका के अवसरों को तैयार करना भी था। कार्यक्रम के एक भाग के तौर पर, महिलाओं को संगठित किया गया और अक्टूबर 2013 में मां भैरबी नामक स्वयं सहायता समूह का गठन किया गया। गोलपी समूह की एक सदस्य थी। समूह सशक्तिकरण, जैविक खेती एवं कम्पोस्ट बनाना एवं अन्य विषयों पर स्वयं सहायता समूह का सशक्तिकरण किया गया। गोलपी को कृषि पद्धतियों एवं घर—परिवार के साथ—साथ एक किसान के तौर पर अपनी खेती को प्रबन्धित करने के ऊपर प्रशिक्षित किया गया।

अप्रैल 2015 में, इन समस्याओं को पहचान कर चेतना जैविक ने ट्रेडीक्राफ्ट एक्सचेन्ज, यूके एवं द बिग लॉटरी, यूके के सहयोग से ''स्थाई खेत, स्थाई भविष्य'' नामक एक परियोजना के अन्तर्गत समुदाय के बीच काम करना प्रारम्भ कर दिया। दक्षिणी—पश्चिमी उड़ीसा के दो जिलों में कपास की खेती करने वाले परिवारों की नाजुकता को कम करना तथा खाद्य सुरक्षा को बढ़ाना इस कार्यक्रम का व्यापक उद्देश्य था। इस परियोजना को इस प्रकार डिजाइन किया गया था कि इससे छोटे—मझोले किसानों द्वारा उच्च जोखिम भरे, उच्च लागत वाले और अस्थाई कपास की खेती करने वाले छोटे—मझोले किसानों की समस्याओं के ऊपर काम किया जा सके। इसका एक दूसरा पहलू यह भी था कि इस परियोजना के माध्यम से छोटे पैमाने पर कपास की खेती करने वाली महिला

तालिका 1: कपास में अन्तः खेती और उनके फायदे

अन्तः फसलें	अनुपात (कपास अन्तः फसल)	फायदे
अरहर	10 : 2	अतिरिक्त आमदनी प्राप्त होती है, मुख्य फसल बरबाद होने की स्थिति में फसल बीमा के तौर पर होती है, मृदा उर्वरता उन्नत होती है।
मूंग/उड़द/चना	15 : 1	अतिरिक्त आमदनी प्राप्त होती है, कीटों को चूस लेती है, नाइट्रोजन के रूप में मृदा उर्वरता उन्नत होती है।
ट्रेप फसलें		
गेंदा, सूरजमुखी	कहीं–कहीं बुवाई	एक अमेरिकन कीट के लिए ट्रैप फसल के तौर पर है, अतिरिक्त आमदनी प्राप्त होती है।
भिण्डी	कहीं–कहीं बुवाई	एरिस/स्पॉटेड बोलवार्म के लिए ट्रैप फसल के तौर है, अतिरिक्त आमदनी प्राप्त होती है।
अरण्डी	मेड़ पर बुवाई तथा कपास में कहीं–कहीं बीच में बुवाई	स्पोडोपेट्रा के लिए ट्रैप फसल है, अतिरिक्त आमदनी प्राप्त होती है।
मेड़ की फसलें		
मक्का, ज्वार	मेड़ पर बुवाई	प्राकृतिक दुश्मनों/परागणों को बढ़ावा देता है, अतिरिक्त आमदनी प्राप्त होती है।

किसानों की सूचनाओं, तकनीक एवं आय अर्जन विकल्पों तक पहुँच बढ़ाई जाये, जिससे स्वामित्व और पहुँच बढ़ने तथा संसाधनों पर प्रत्यक्ष नियंत्रण के माध्यम से परिवार में उनकी स्थिति बेहतर हो सके। 2015 तक, गोलपी धान, दलहन, मोटे अनाजों एवं मक्का की खेती करती थीं। 2015 में, चेतना जैविक के सहयोग से उन्होंने कपास की जैविक खेती करनी प्रारम्भ की। उन्हें कपास की खेती के विभिन्न जैविक पद्धतियों के ऊपर प्रशिक्षित किया गया। प्रशिक्षणों का आयोजन कपास की खेती से पहले, कपास की खेती के दौरान एवं कपास की खेती के बाद भी किया गया। प्रशिक्षणों के साथ उन्हें कम दामों पर कपास की गैर जीएमओ बीज एवं जैविक कपास के विपणन पर भी सहयोग किया गया। इसके अतिरिक्त, उन्हें स्वयं सहायता समूह सशक्तिकरण, नेतृत्व, संचार एवं जेण्डर के मुद्दों पर भी प्रशिक्षित किया गया।

जैविक पहल

किसानों को जैविक खेती की तरफ प्रोत्साहित करने एवं उन्हें सक्षम बनाने हेतु परियोजना द्वारा बहुत से पहल किये गये। उदाहरण के तौर पर, जल प्रयोग क्षमता एवं उत्पादकता को उन्नत बनाने के लिए तालाबों की गाद का प्रयोग एक जैविक परिवर्तन के रूप में किया गया। किसानों ने गाँव में उन तालाबों को चिन्हित किया, जहाँ पर पर्याप्त मात्रा में स्वस्थ गाद थी। इन चिन्हित तालाबों से नमूनों को एकत्र किया गया और मृदा में जैविक कार्बन की मात्रा एवं अन्य सामग्रियों की स्थिति को जानने के लिए प्रयोगशालाओं में परीक्षण हेतु भेजा गया। प्रयोगशाला से सकारात्मक परिणाम प्राप्त होने के बाद किसानों को तालाबों की मिट्टी को अपने खेतों में डालने हेतु संस्तुत किया गया। प्रत्येक किसान को यह बताया गया कि वे अपने एक एकड़ खेत में कम से कम 10 टन गाद को डालें। गोलपी ने वर्ष 2017–18 में अपने एक एकड़ खेत में 16 ट्रैक्टर गाद डाली। सरकार द्वारा तालाबों के पुनर्नवीनीकरण का कार्य पंचायतों के माध्यम से कराये जाने के कारण गाद को निकालना आसान हो गया था।

पौधों के अपशिष्टों का उपयोग तरल खाद तैयार करती महिलाएं

विविध फसल प्रणाली को बढ़ावा देने की एक दूसरी रणनीति अपनायी गयी। विविधता आधारित फसल प्रणाली को प्रोत्साहित करने से किसानों की आय बढ़ने के साथ ही उनके परिवार की खाद्य सुरक्षा तैयार करने में भी सहायता मिलती है। पहले, गोलपी का परिवार धान की खेती परिवार के उपयोग के लिए तथा कपास की खेती बाजार के लिए करता था। कपास की एकल खेती की जाती थी।

अब कपास के साथ अन्तः खेती के रूप में चना उगाने से न केवल मृदा उर्वरता बढ़ती है, वरन् यह

> **फसल के चारों तरफ अरण्डी एवं मक्का की फसल लगाने से कपास की फसल में कीट लगने की घटनाओं में कमी आयी।**

मुख्य फसल के खराब होने की स्थिति में फसल बीमा के रूप में भी काम करता है। कपास के साथ मूंग, उड़द और चना की खेती की जाती है, जिससे परिवार को पोषणयुक्त दलहन उपलब्ध होता है। गेंदा, गुलाब एवं अरण्डी को कीट नियंत्रक फसल के रूप में लगाते हैं। परागणकर्ताओं की उपस्थिति को बढ़ाने के लिए मक्का और बाजरा को फसल के चारों तरफ लगाते हैं।

किसानों को तरल खाद का उपयोग करने हेतु प्रोत्साहित किया गया। क्योंकि यदि मृदा में तरल खाद का उपयोग किया जाये तो पौधे अपनी पत्तियों के माध्यम से 20 गुना अधिक तेजी से पोषण अवशोषित कर सकते हैं। खेत के अपशिष्टों से बनी खाद अथवा पौधों की पत्तियों को कुछ दिनों अथवा कुछ हफ्तों तक पानी में सड़ाकर तरल खाद तैयार की जाती है। पंचगव्य, अम्रुतपानी, जीवाम्रुत एवं वर्मीवाश जैसे तरल खादों को गोलपी ने वृद्धि एवं प्रजनन के दौरान उपयोग किया।

गोलपी को कपास और अन्य दूसरी फसलों में कीट नियंत्रण करने हेतु बहुत सी चुनौतियों का सामना करना पड़ा। चेतना ने गोलपी को कीट प्रबन्धन तकनीकों पर प्रशिक्षण देकर इन चुनौतियों से निपटने में सहायता की। जैव कीटनाशकों को बनाने तथा कीट लगी फसलों पर उसके उपयोग जैसे विषयों पर जानकारी प्राप्त करते हुए उन्हें विभिन्न तकनीकों को सीखने में मदद मिली। उन्होंने कपास एवं अन्य फसलों में कीटों के प्रबन्धन हेतु एक विकल्प के तौर पर नीम बीज करनेल के रस एवं मिर्चा– लहसुन स्प्रे को तैयार कर उसका उपयोग किया। गोलपी ने हाथ से लार्वा को हटाना, डण्डे से पीटना और पेड़ को हिलाकर लार्वा को गिराना जैसी यांत्रिक तरीकों को भी अपनाया।

तालिका 2 : जैविक उत्पादन प्रणाली के साथ फसल उपज में वृद्धि

क्र.	फसल का प्रकार	कुन्तल/एकड़ में उत्पादन	
		बदलाव से पहले	बदलाव के बाद
1.	कपास	3–4	7–8
2.	धान	8–10	12–14
3.	धान (श्री विधि से)	–	18–20
4.	टांगुन	2–3	5–6
5.	अरहर	2–3	4–5
6.	मूंग	2–3	3–5
7.	उड़द	2	4–5
8.	चना	4	6–7
9.	मूंगफली	5.5	7
10.	टमाटर	20–30	50–60
11.	बैंगन	35–40	50–60

कुछ प्रभाव

इन जैविक माध्यमों को लगातार अपना कर गोलपी ने न केवल कुछ फसलों में वरन् विविध फसलों में पहले से बेहतर उपज प्राप्त की। उन्होंने पहले वर्ष में 2 एकड़ खेत में कपास की खेती की और 4 कुन्तल की उपज प्राप्त की।

स्वयं सहायता समूह सदस्यों के लिए एक प्रशिक्षण सत्र

दूसरे वर्ष में, उपज बढ़कर 7 कुन्तल हो गयी और तीसरे वर्ष में यह उपज बढ़कर 12 कुन्तल हो गयी। चेतना जैविक के सहयोग से कपास की खेती करने तथा अन्य विभिन्न प्रोत्साहनपूर्ण गतिविधियों को अपनाकर गोलपी के परिवार ने पिछले वर्षों की तुलना में अपनी आमदनी को तिगुना किया। तालिका 2 के माध्यम से क्षेत्र में फसल की उपज में औसत वृद्धि को दर्शाया गया है।

क्षमता वर्धन प्रयासों से गोलपी जैसे परिवारों के आत्मविश्वास में वृद्धि हुई। चेतना द्वारा एमकेएसपी एवं एसएफएसएफ जैसी परियोजनाओं के माध्यम से टाटा ट्रस्ट जैसी एजेन्सियों से जुड़ाव स्थापित कर किसानों की जमीन की उत्पादकता को बढ़ाने में सहायता मिली। गोलपी अब एक प्रमाणित जैविक किसान है। विभिन्न प्रखण्ड एवं जिला स्तरीय फोरमों पर प्रशिक्षणों एवं बैठकों में सहभागिता करने के कारण उनकी नेतृत्व गुणवत्ता में भी वृद्धि हुई है। परिवार एवं समुदाय स्तर पर उनका महत्व बढ़ा है, अब उनके निर्णयों को लोग मानने लगे हैं। वे अपने गांव के विभिन्न समूहों के सदस्यों के साथ मिलकर विभिन्न सामाजिक मुद्दों के ऊपर कार्य करने में सक्षम हुई हैं। उनकी सामाजिक–आर्थिक स्थिति उन्नत हुई है और वे समाज में अधिक सम्मानजनक जीवन जी रही हैं।

■

वाई एम एम श्रीकर
निदेशक- कार्यक्रम
चेतना जैविक किसान संघ
3-5-703/4, विट्ठलवाड़ी, नारायनगुडा,
हैदराबाद, तेलंगाना, भारत- 500 029
ईमेल : srikar@chetnaorganic.org.in

देबाशीश मोहापात्रा
आपूर्ति श्रृंखला विशेषज्ञ
ट्रेडीक्राफ्ट् इण्डिया, दूसरा तल, बाधे हाउस
6-3-788/36 एवं 37 ए, दुर्गानगर, आमेरपेट, हैदराबाद-16
ईमेल : mohapatra.debasis@gmail.com

Biological Crop Management
LEISA INDIA, Vol. 20, No.2, June 2021

खेत से उच्च उत्पादन पाने के लिए जैविक

एम एच मेहता

खेती में लगने वाली लागत को कम करने और एक स्थाई तरीके से उत्पादकता को बढ़ाने की नितान्त आवश्यकता है। ऐसे लक्ष्य को पूरा करने हेतु किसानों की मदद से नये प्रकार के कृषि–जैव निवेशों का उपयोग करते हुए 20 : 20 मॉडलों को तैयार किया जा सकता है। जैव–रसायनों एवं जैविक कीटनाशकों के साथ कृषि अपशिष्टों से तैयार वैज्ञानिक जैविक खाद ने पर्यावरणसम्मत तरीके एवं न्यूनतम लागत पर खेत की उत्पादकता को उन्नत बनाने की क्षमता को प्रदर्शित किया है।

खेत में जैविक खाद का प्रयोग

यूनाइटेड नेशन्स के स्थाई विकास लक्ष्य इस बात पर ज्यादा जोर देते हैं कि हमारी वर्तमान निवेश केन्द्रित खाद्य प्रणाली को अधिक स्थाई प्रणाली में बदलने की आवश्यकता है। भारत जैसे देश में, जहाँ अभी भी बहुसंख्य आबादी कृषिगत आजीविका पर निर्भर है, वहाँ पारिस्थितिकी कृषिगत प्रणाली से खेती करना आगे का एक रास्ता हो सकता है। पारिस्थितिकी–कृषिगत अभ्यासों के माध्यम से भूख, कुपोषण, गरीबी, पर्यावरणीय ह्रास एवं जलवायु परिवर्तन जैसी चुनौतियों से भी निपटा जा सकता है। पारिस्थितिकी–कृषि का अभी उदय हो रहा है। नयी पीढ़ी की जैव निवेश जैसे– जैव–रसायनों, जैव–कीटनाशकों एवं जैविक खादों आदि के विकास आने वाले दिनों में उल्लेखनीय भूमिका निभायेंगे।

8 मिलेनियम लक्ष्यों में से गरीबी एवं भूख का उन्मूलन तथा पर्यावरणीय स्थाईत्व शायद सबसे अधिक प्रमुख और पूरक लक्ष्य हैं। हरित क्रान्ति की वजह से भारत एवं अन्य बहुत से देशों में भोजन का संकट दूर हुआ और पर्याप्त/अधिक भोजन की उपलब्धता होने लगी, जो एक बड़ा बदलाव है। यदि हम कृषि के क्षेत्र में आने वाली उन चुनौतियों की बात करें, जिनका सामना अगले कुछ दशकों में किसानों को करना पड़ेगा तो यह स्पष्ट है कि प्रति व्यक्ति बहुत कम जमीन पर, कम पानी के साथ और पर्यावरणीय चुनौतियों को झेलते हुए वर्ष 2025 तक खाद्य उत्पादकता दुगुनी एवं वर्ष 2050 तक उत्पादन को तिगुना करना होगा। हालांकि कृषि परियोजनाओं का वर्तमान परिदृश्य एक धूमिल भविष्य है। भारतीय किसान कृषि निवेशों जैसे– बीज, उर्वरक, कीटनाशकों आदि पर लगभग 2 लाख करोड़ रूपये व्यय करते हैं। लगभग रू0 50000.00 करोड़ उर्वरक अनुदान में चले जाते हैं। रसायनिक उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग से मृदा उर्वरता में ह्रास होता है और हमारी मृदा में जैविक कार्बन की अत्यन्त आवश्यकता है।

यह समय एक स्थाई, संतुलित व किसान हितैषी पारिस्थितिकी कृषिगत क्रान्ति का है। इस समय आसानी से एवं कम मूल्य पर उपलब्ध होने वाले पर्यावरणसम्मत एवं प्रभावी विकल्पों की अत्यन्त एवं त्वरित आवश्यकता है। सौभाग्य से कई नये/वैकल्पिक विकास बहुत आशान्वित करने वाले हैं।

वैकल्पिक मॉडल

कुछ वर्षों पहले, हमारी संस्था विज्ञान आश्रम के युवा वैज्ञानिकों के दल ने जब किसानों के साथ संवाद स्थापित किया तो उनसे कुछ अनपेक्षित प्रतिक्रिया मिली। अधिकाँश क्षेत्रों में, भारी मात्रा में कीटनाशकों एवं रसायनों का उपयोग करने वाले किसान, इनके हानिकारक प्रभावों एवं घटते शुद्ध आमदनी तथा पर्यावरणीय समस्याओं के बारे में बात–चीत करने एवं सुनने के लिए तैयार थे। हालांकि वे यह भी कहते थे, ''क्या इसका कोई विकल्प है?'' जब उन्हें नये तरीके से तैयार किये गये कृषि जैव निवेशों के बारे में बताया गया तो उनका सीधा से जवाब था, ''आप इसे बना दें और हमें दें। हम प्रयास करना चाहते हैं। इस प्रकार टीम को गुजरात जीवन विज्ञान नाम से कृषि जैव निवेशों की एक उत्पादन इकाई प्रारम्भ करने को बाध्य होना पड़ा।

अब मल्टी माइक्रोबायल कन्सोर्टिया तकनीक के बारे में बेहतर समझ विकसित हो चुकी है जिससे एक तरफ तो फसल उत्पादकता में उल्लेखनीय सुधार हो सकता है और दूसरी तरफ कृषि रसायनिक निवेशों की लागत में कमी

यह समय एक स्थाई, संतुलित व किसान हितैषी पारिस्थितिकी–कृषिगत क्रान्ति का समय है।

चापड़ (गुजरात) में केले के खेत पर प्रयोग

आयी है। इसके साथ ही, कृषि अपशिष्टों, फार्म यार्ड मेन्योर आदि से तैयार उच्च गुणवत्ता वाले जैव कम्पोस्ट आसानी से उपलब्ध भी हो जाते हैं और मानक के अनुसार गुणवत्ता सुनिश्चित करते हुए मृदा के लिए आवश्यक कार्बन तथा अन्य पोषक तत्वों की पूर्ति करते हैं। एक और चौंकाने वाला विकास जैव कीटनाशकों के क्षेत्र में हुआ है।

भारत, अफ्रीका और सुदूर पूर्वी देशों के विभिन्न भागों में प्रक्षेत्र प्रदर्शन अध्ययन हेतु 20 : 20 मॉडल के साथ कार्य किया गया। इस मॉडल में निवेश लागत में लगभग 20 प्रतिशत तक की कमी आ सकती है और ठीक उसी समय उत्पादकता में 20 प्रतिशत तक की वृद्धि भी संभव है, जो विश्व के अधिकाँश किसानों के लिए एक वरदान हो सकती है। यह वह मॉडल है, जिसे एक विकासवादी तरीके से आसानी से अपनाया जा सकता है।

हाल के दिनों में, 20 : 20 मॉडल किसानों के लिए शायद सबसे अधिक व्यवहारिक एवं लोकप्रिय मॉडल के रूप में उभर रहा है। यह महसूस किया जा रहा है कि, यद्यपि पर्यावरणीय समस्या एवं रसायनिक खेती की उच्च लागत के बारे में सभी को पता है और सभी रसायनों को रातों–रात रोका या दूर नहीं किया जा सकता है। दूसरी तरफ, अचानक से पूरी तरह से जैविक खेती करने वाले किसानों को निराशा एवं समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है, जिससे उनके अन्दर असंतोष आ रहा है। इन दोनों तरीकों के बीच, 20 : 20 के मॉडल ने एक व्यवहारिक और सकारात्मक तथा आसानी से अपनाया जाने वाला रास्ता दिखाया। यह भी देखा गया कि 20 : 20 मॉडल का पहला वर्ष बीतने के पश्चात्, बहुत से प्रगतिशील किसानों द्वारा अगले दो वर्षों में बहुत जैविक निवेशों का उपयोग बहुत आसानी से दुगुना करते हुए शत–प्रतिशत जैविक उत्पादों को प्राप्त किया जा सकता है। ऐसे किसान अलग–अलग कृषि–जलवायुविक परिस्थितियों और भिन्न–भिन्न फसलों वाले हो सकते हैं।

तालिका 1: बहुसूक्ष्म जैविक उत्पादों, जैव–उर्वरकों एवं जैव खादों का उपयोग करते हुए विशिष्ट उत्पादकता वृद्धि के आंकड़े

फसल	स्थान	परिणाम
केला	कृषि विश्वविद्यालय–नवसारी, त्रिची–तमिलनाडु	20 प्रतिशत कम यूरिया के साथ 25 प्रतिशत अधिक उत्पादन
चावल	बैंकाक–थाइलैण्ड, वापी–गुजरात	उत्पादकता में 14–19 प्रतिशत तक की वृद्धि
मक्का	गौटेंग–दक्षिणी अफ्रीका	25 प्रतिशत अधिक उत्पादन, यूरिया का खपत 25 प्रतिशत कम
रेंड़ी	कच्छ–गुजरात	उपज में 17–22 प्रतिशत तक की वृद्धि
पपीता	उत्तरी गुजरात	उपज में 21 प्रतिशत तक की वृद्धि

तालिका 2: जैव कीटनाशक एवं जैव कवकनाशी के उपयोग से बीमारियों का नियंत्रण

फसल	स्थान	परिणाम
बैंगन	सौराष्ट्र, त्रिची–तमिलनाडु	माईट–माईट नहीं के उपयोग से घुन पर नियंत्रण हुआ और 15 दिनों तक दुबारा छिड़काव करने की आवश्यकता नही थी।
कपास	मध्य गुजरात, अलवर–राजस्थान	नीम का उपयोग करने पर विभिन्न प्रकार के कीड़ो का 80–85 प्रतिशत नियंत्रण हुआ।
मूंगफली	सौराष्ट्र	ट्राइकोडर्मा के साथ सुपरलाइफ मिलाकर उपयोग करने से कवकजनित बीमारियों का 90 प्रतिशत तक नियंत्रण
गुलाब	मॉरीशस, मध्य त्रिची–तमिलनाडु	माईट–माईट नहीं के उपयोग से माइट की समस्या से 90 प्रतिशत तक छुटकारा और बहुत अच्छी वृद्धि
आलू	मध्य गुजरात, बिहार	मृदा में वण्डरलाइफ–जी का उपयोग करने से 94 प्रतिशत तक बीमारियों को नियंत्रित किया गया और उपज में 22 प्रतिशत तक की वृद्धि दर्ज की गई।

हरित जैव निवेश – विशिष्ट उत्पाद रेंज

कीट नियंत्रण
सूक्ष्मजीव जैव कीट नियंत्रक (ट्राइकोडर्मा, बेसिलस बवेरिया बीटी आदि) वानस्पतिक अपशिष्ट एवं संयोजन (जैसे– ीमन, करंज आदि)

विकास नियामक
जैव जीवन सुपर जैव जीवन अमीनो एसिड सूक्ष्म पोषक तत्व समुद्री घास अपशिष्ट वृद्धिकारक

जैव उर्वरक कृषि अपशिष्ट डिकम्पोजर समृद्ध जैविक खाद

नाइट्रोजन स्थिरीकरण, घुलनशील फास्फोरस, जैव फंगीसाइड्स एवं वृद्धि का सूक्ष्म जैविक संयोजन

फसल अपशिष्टों से जैविक कम्पोस्ट

प्रक्षेत्र प्रदर्शन

मोटे तौर पर, जैव निवेशों को मुख्यतः तीन वर्गों – पोषण प्रबन्धन (जैव–उर्वरक, समृद्ध जैव–खाद, मृदा में जैव उर्वरकों एवं जैव कवकनाशी का बहु सूक्ष्म जीवाश्म संयोजन), जैव–कीटनाशक (बहु सूक्ष्म जीवाश्म जैव–कीटनाशक, वानस्पतिक, फेरोमोन्स आदि) एवं विकास वृद्धिकारक (अमीनो एसिड, सूक्ष्म पोषक तत्व, समुद्री शैवाल के अर्क, विकास को बढ़ावा देने वाले और हार्मोन आदि) में बांटा गया है। इससे एक तरफ तो उत्पादकता में वृद्धि संभव है, दूसरी तरफ कृषि जैव उत्पादों के उपयोग के कारण खेती की लागत में भी कमी आयेगी।

एक कृषि विश्वविद्यालय, एक प्राइवेट बायोटेक कम्पनी और एक स्वयंसेवी संगठन तीनों को मिलाकर प्रक्षेत्र प्रदर्शनों का आयोजन किया गया। ये तीन सहभागी थे – नवसारी कृषि विश्वविद्यालय, एक नयी कृषि एवं इनवायरो बायोटेक कम्पनी–दक्षिण गुजरात, गुजरात लाइफ साइन्स (प्राइवेट) लिमिटेड एवं द साइन्स आश्रम नामक किसानों के साथ काम करने वाली एक स्वयंसेवी संगठन। प्रक्षेत्र प्रदर्शनों के लिए विभिन्न प्रकार के उत्पादों को लिया गया था। इनमें समृद्ध जैव कम्पोस्ट, जैव कीटनाशक, जैव उर्वरक आदि कुछ विशिष्ट जैव उत्पाद शामिल थे।

हस्तक्षेप करने के दौरान प्राप्त आँकड़ों के आधार पर यह स्पष्ट रूप से स्थापित किया गया है कि उत्पादकता में वृद्धि हुई और कृषि–रसायनों की लागत में कमी आयी है। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि किसानों को एक ऐसा व्यापक मॉडल उपलब्ध कराया जा सकता है, जिसमें एक ही समय में कृषि निवेशों की लागत में पर्याप्त कमी और उत्पादकता में वृद्धि को हासिल किया जा सकता है। यह पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण सम्मत निवेशों के माध्यम से पूरा किया जा सकता है और स्थाई कृषि अभ्यासों के लिए एक अन्य दूसरी बड़ी उपलब्धि है।

यह ध्यान दिया जा सकता है कि इस मॉडल की व्याख्या करने में, कुछ विशिष्ट जैव उत्पादों के लिए आंकड़े संकेत के रूप में दिये गये हैं। किसी भी मानक आपूर्तिकर्ताओं से सही संयोजनों का प्रयोग किया जा सकता है। किसान मानकपूर्ण माइक्रोबियल कल्चर का उपयोग करते हुए अपने खेतों के अपशिष्ट तथा पशुशाला के अपशिष्टों से अपना स्वयं का जैविक खाद तैयार कर सकते हैं।

प्राकृतिक रूप से फसल अपशिष्टों से जैव–कम्पोस्ट तैयार करना

फसल अपशिष्टों को जलाना एवं मृदा में जैव कार्बनों की अपर्याप्त मात्रा आज पूरे विश्व की समस्या है। उत्तर भारतीय राज्यों में बड़े पैमाने पर फसल अपशिष्टों को जलाने का काम किया जाता है, जिससे मृदा स्वास्थ्य का क्षरण, वायु प्रदूषण एवं स्वास्थ्य समस्याएं उत्पन्न होती हैं। इन क्षेत्रों के किसान धान की कटाई के 20 दिनों बाद ही गेंहूँ की बुवाई करने के लिए खेतों में ही फसल अपशिष्टों को जलाने का काम करते हैं।

कई वर्षों तक प्रक्षेत्र में काम और शोध एवं प्रदर्शन करने से संकेत मिलता है कि बहु माइक्रोबियल मिश्रण के साथ प्राकृतिक तौर पर बायो–कम्पोस्टिंग फसल अवशेषों से निपटने के लिए सबसे अच्छा और व्यवहारिक समाधान प्रदान करता है। बहु माइक्रोबियल मिश्रण का उपयोग

करते हुए हरियाणा के एक खेत में चावल के डण्ठल पर प्राकृतिक उपचार पर एक क्षेत्र प्रदर्शन किया गया।

केले एवं अन्य फसल अपशिष्टों के निपटान की समस्या बढ़ रही है। प्रायः किसानों की चर्चा में केला की कटाई के बाद उसके अपशिष्टों का निपटान एक बड़ी समस्या के तौर पर उभर कर आया। गुजरात में आणंद और तमिलनाडु में त्रिची जैसे कुछ महत्वपूर्ण सघन क्षेत्रों में बैठकें की गयीं। ये दोनों क्षेत्र केले की अत्यधिक मात्रा में खेती के लिए जाने जाते हैं। केले के फल की तुड़ाई करने के पश्चात्, उसके तना और अन्य अवशेषों को सामान्यतः सड़कों के किनारे फेंक दिया जाता है। बाद में श्रम की कमी के कारण यह भी मुश्किल हो गया।

किसानों के साथ बात—चीत करते समय यह महसूस किया गया कि केले की तुड़ाई के बाद अवशेषों के पुनर्चक्रीकरण करने पर जोर देने हेतु एक प्रणाली की आवश्यकता है। केले की तनों में अधिक मात्रा में पानी होने के कारण प्राकृतिक तरीके से मृदा संवर्धन के लिए बायोमॉस के उपयोग पर अधिक जोर दिया गया। बड़ोदरा—आणंद केला क्षेत्र के बीच एक केले के खेत में बहु माइक्रोबियल मिश्रण का उपयोग कर एक प्रक्षेत्र प्रदर्शन किया गया।

परिणाम स्पष्ट हैं। 20 दिनों के भीतर, कृषि अपशिष्टों जैसे— चावल का भूसा, केला का अपशिष्ट का आंशिक अपघटन हुआ था। मृदा के भीतर कार्बन / नाईट्रोजन का अनुपात कम हुआ और जलधारण क्षमता में सुधार हुआ। इसके अतिरिक्त, श्रम लागत और निवेश लागत की बचत और सूक्ष्म पोषण की बेहतर प्रतिधारण क्षमता जैसे प्राकृतिक उपचार के दूसरे फायदे भी हैं।

निष्कर्ष

कई स्थितियों में और भिन्न—भिन्न कृषि—जलवायुविक परिस्थितियों में यह देखा गया कि अच्छी जैविक खाद का उचित प्रयोग और उपयोग पारम्परिक के साथ ही साथ जैविक खेती अभ्यास दोनों में विभिन्न फसलों के उच्च और स्थाई उत्पादन के लिए मुख्य और शायद सबसे अधिक महत्वपूर्ण निवेश है। वास्तव में, जैविक खादों के उचित प्रबन्धन और उपयोग के बिना जैविक खेती व्यवहारिक नहीं हो सकती। बहु माइक्रोबियल के साथ वैज्ञानिक जैव—कम्पोस्टिंग, स्थाई खेती के लिए एक अत्यधिक मूल्यवान कृषि निवेश तैयार करना एक मानक अभ्यास बन जाना चाहिए।

यह विकसित करना और प्रदर्शित करना सम्भव हो गया है कि अजोटोबैक्टर, अजोस्पीरिलियम, टोरूलोस्पोराग्लोबोसा, बैसिलियस कोआगुलन्स, सेलुलोमोनस एसपीएस, प्लेरोटस एसपीएस आदि के विभिन्न संयोजनों को मिलाकर बहु माइक्रोबियल ीकरण, पोटैशियम घुलनशील, पौध विकास एवं कवक विरोधी गतिविधि होती है।

कन्सोर्टिया कल्चर मिलाकर उपयोग करने से एक स्थाई तरीके से उत्पादकता वृद्धि करने में बहुत प्रभावी हो सकती है। कृषि अपशिष्टों में उपयोग करने पर इन कल्चरों का मुख्य कार्य नाइट्रोजन स्थिरीकरण, पोटैशियम घुलनशील, पौध विकास एवं कवक विरोधी गतिविधि होती है।

ये जैव निवेश कम लागत, किसान अनुकूल एवं पर्यावरणसम्मत होते हैं और स्थाई कृषि के लिए एक वरदान हैं। पहले की मान्यताओं के विपरीत, इसने बिहार, राजस्थान, तमिलनाडु, कच्छ—गुजरात आदि बहुत से विभिन्न परिस्थितियों में उच्च उत्पादकता स्पष्ट रूप से प्रदर्शित की है। वास्तव में, यह साबित किया गया है कि संकट के दौरान, नयी एवं उचित तकनीकें छोटे और मझोले किसानों द्वारा तीव्र गति से अपनाई गयी हैं। और यहां तक कि ये मॉडल असिंचित क्षेत्रों में भी लागत प्रभावी एवं पर्यावरणसम्मत हैं।

सन्दर्भ

मेहता एम एच, 'पारिस्थितिकी कृषि क्रान्ति — व्यवहारिक सीखें और आगे का रास्ता', 2017, न्यू इण्डिया पब्लिशिंग एजेन्सी (एनआईपीए) (www.nipabooks.com)

अहलावत आर.पी.एस. एवं अन्य ''विभिन्न फसलों के लिए जैविक खेती का वैज्ञानिक पैकेज'', नवम्बर, 2007, एग्रोनामी पर नैनीताल कान्फ्रेन्स, नवसारी।

मेहता एम.एच.,''20—20 मॉडल बुक, एग्रीकल्चर इयर बुक—2009''

■

एम एच मेहता
अध्यक्ष–पारिस्थितिकी कृषि पर वर्किंग ग्रुप– आई.सी.एफ.ए., नई दिल्ली
पूर्व कुलपति, गुजरात कृषि विश्वविद्यालय
द साइन्स आश्रम/गुजरात लाइफ साइन्सेज–बड़ोदरा
गुजरात
ईमेल : chairman@glsbiotech.com
www.glsbiotech.com

Biological Crop Management
LEISA INDIA, Vol. 20, No. 2, June 2018

छोटे-छोटे नवाचारों ने खेती बनाई लाभप्रद

अर्चना श्रीवास्तव, अजय कुमार सिंह एवं रामसूरत

छोटी व सीमान्त जोत पर खेती करने वाली महिला किसानों ने खेती की अन्तःफसली तकनीक में छोटे-छोटे नवाचारों को अपनाकर न सिर्फ अपनी मुख्य फसल से होने वाली आय को दुगुना किय है, वरन् खेती में लगने वाली लागत में भी कमी की है। पश्चिमी चम्पारण के नौतन प्रखण्ड की किसान छठिया देवी ने इस सफलता को बखूबी दर्शाया है।

उत्तर प्रदेश और बिहार में अन्तः खेती खेती की एक सामान्य विधा है, जिसके अन्तर्गत किसान विविध फसलों की खेती एक निश्चित समयान्तराल पर एक साथ करते हैं। अन्तः खेती करने के पीछे किसानों की मंशा एक साथ दोहरा लाभ लेना होता है। अथवा यह भी कह सकते हैं कि अन्तः खेती कर किसान अपने खेती के जोखिम को कम करता है कि यदि किसी भी परिस्थितिवश एक फसल की क्षति हो जाये तो दूसरी फसल से उसकी भरपाई हो सके।

पिछले कुछ वर्षों में वर्षा, शीतकाल एवं ग्रीष्मकाल में बदलाव स्पष्ट परिलक्षित हो रहा है और प्रत्येक ऋतु में फसलों पर मौसमों के पड़ने वाले दुष्प्रभाव भी दिखने लगे हैं। ऐसी स्थिति में परम्परागत तरीके से की जाने वाली अन्तः खेती पर भी व्यापक असर पड़ा है और पूर्व की भाँति परिणाम नहीं प्राप्त हो रहा है। किसान उर्वरकों का प्रयोग तो अन्धाधुन्ध कर रहे, परन्तु उपज में वृद्धि नहीं हो रही। बिहार के जिला पश्चिमी चम्पारण के नौतन प्रखण्ड की बात करें तो यहाँ की मुख्य फसलें धान, मक्का व गन्ना है, परन्तु किसान इनकी एकल खेती ही करते हैं। खरीफ एवं जायद ऋतु में किसान मक्का की खेती मुख्य फसल के रूप में करते हैं, परन्तु रबी में मक्का की फसल नहीं लेते, क्योंकि जोत छोटी होती है और रबी में गेंहू, सरसों, आलू एवं सब्ज़ियों की खेती करना इनकी प्राथमिकता में होती है। पिछले कई वर्षों से शीतकाल में भुट्टे के रूप में मक्का की मांग बढ़ी है, फिर भी किसान इसे एकल खेती के तौर पर करने में रूचि नहीं ले रहे थे, क्योंकि उन्हें खेत फंसने की चिन्ता बनी रहती है। ऐसी स्थिति में संस्था गोरखपुर एनवायरन्मेन्टल एक्शन ग्रुप ने कुछ उत्साही किसानों के साथ आलू व मक्का की अन्तःखेती करने की तकनीक पर बल दिया।

नवाचार

वर्ष 2018 में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार के वित्तीय सहयोग से जब स्वैच्छिक संगठन गोरखपुर एनवायरन्मेण्टल एक्शन ग्रुप ने उत्तर प्रदेश के गोरखपुर जनपद के विकास खण्ड कैम्पियरगंज एवं जंगल कौड़िया तथा बिहार के पश्चिमी चम्पारण जिले के नौतन प्रखण्ड में काम करना प्रारम्भ किया तो उपरोक्त मुद्दों को संज्ञान में लिया।

मक्का के खेत में छठिया देवी

संस्था कार्यकर्त्ताओं ने किसानों के साथ बैठकें, किसान विद्यालय आदि का संचालन किया जहाँ पर किसानों की तरफ से आने वाली समस्याओं का समाधान स्वयं भी किया और कृषि विशेषज्ञों, कृषि वैज्ञानिकों से कराया। इसी दौरान यह समस्या सामने आयी कि रबी ऋतु में आलू यहाँ की एक मुख्य फसल है। मौसम परिवर्तन की वजह से आलू की खेती प्रभावित हो रही है और किसानों को हानि उठानी पड़ रही है। अतः कृषि विशेषज्ञों एवं अनुभवी किसानों के साथ मिलकर आलू एवं मक्का की अन्तः खेती करने पर विचार विमर्श किया गया। व्यापक चर्चा करने के बाद किसानों ने आलू व मक्का की अन्तः खेती में छोटे—छोटे नवाचारों को अपनाकर खेती को लाभप्रद बनाने की दिशा में पहल की। पश्चिमी चम्पारण के नौतन प्रखण्ड के गाँव जगदीशपुर बहुअरवा की मॉडल किसान छठिया देवी ने इसका सफल उदाहरण प्रस्तुत किया।

पहल

50 वर्षीय महिला किसान छठिया देवी के पास स्वयं का एक एकड़ खेत है, जिसपर उनके पाँच सदस्यीय परिवार

की आजीविका निर्भर करती है। छठिया देवी पहले भी अन्तः खेती करती थीं और निश्चित तौर पर आमदनी एकल खेती की अपेक्षा अधिक थी, परन्तु पिछले कुछ वर्षों से उन्हें यह अनुभव हो रहा था कि उपज में कोई बढ़ोत्तरी ही नहीं हो रही है। इसके पीछे क्या कारण है? यह तो उन्हें स्पष्ट नहीं हो पा रहा था, परन्तु वे इतना अवश्य मानती थीं कि मौसम में जो बदलाव हो रहा है, उससे फसल पर असर अवश्य पड़ रहा था। इसी समय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के कोर सपोर्ट परियोजना के अन्तर्गत गोरखपुर एनवायरन्मेण्टल एक्शन ग्रुप ने इस गाँव में कार्य करना प्रारम्भ किया और छठिया देवी का जुड़ाव परियोजना से हुआ। समस्या के संदर्भ में विशेषज्ञों की सलाह पर छठिया देवी ने आलू व मक्का की अन्तः खेती में निम्न नवाचारों को अपनाया–

आलू की बुवाई के समय में बदलाव किया। साधारणतया आलू की बुवाई अक्टूबर में होती है, परन्तु इन्होंने 10 नवम्बर के बाद बुवाई की और उसके अगले दिन ही मक्का की बुवाई कर दी।

सामान्यतः मक्का की सीधी बुवाई की जाती है। परन्तु इन्होंने मक्के को पहले 12 घण्टों के लिए पानी में भिगो दिया। तत्पश्चात् बुवाई की। इससे एक तरफ तो बीजों का उपचार हुआ, दूसरी तरफ अंकुरण स्वस्थ हुआ और बीजों का जमाव भी जल्दी हुआ।

आलू और मक्का के बीच की दूरी 18 इंच की रखते हैं, परन्तु इन्होंने 22 इंच की दूरी रखी ताकि दोनों को फलने–फूलने का पर्याप्त स्थान मिले।

इसके साथ ही इन्होंने इस बार 10 कुन्तल कम्पोस्ट खाद में 1 किग्रा0 सी0पी0पी0 मिलाकर बुवाई से पहले खेत में मिला दिया।

छठिया देवी ने अपने 0.30 एकड़ खेत में उपरोक्त नवाचारों को अपनाकर आलू व मक्का की अन्तः खेती की, जिससे उन्हें निम्नवत् फायदे देखने को मिले–

सबसे पहले तो इन्हें सिंचाई कम करनी पड़ी, क्योंकि मक्का का पौधा बड़ा होने से खेत की नमी बनी रहती है।

आलू की फसल के ऊपर मक्के की छाया होने से आलू में पाला व झुलसा रोग का प्रकोप नहीं हुआ। इसके साथ ही अन्य रोगों से भी बचाव होता है।

निराई–गुड़ाई, कम्पोस्ट एवं सिंचाई की लागत में कमी आयी, क्योंकि एक फसल में निराई–गुड़ाई करने से दूसरे फसल के लिए भी जमीन भुरभुरी हो गयी। कम्पोस्ट एवं सिंचाई भी एक फसल के लिए करने पर दोनों फसलों को लाभ हुआ। इस प्रकार एक लागत में ही इनको दो फसलों की उपज प्राप्त हुई, जिससे इनकी आमदनी में वृद्धि हुई।

मार्च में आलू की फसल की खुदाई की गयी और जहाँ सामान्य विधि से इन्हें 14 कुन्तल आलू की उपज प्राप्त होती थी, वहीं इन नवाचारों को अपनाने के बाद इन्हें 40 कुन्तल आलू की उपज प्राप्त हुई।

इनके द्वारा आलू व मक्का की अन्तः खेती में लगने वाले लागत एवं प्राप्त लाभ को निम्न तालिका सं0 1 के माध्यम से देखा जा सकता है–

तालिका सं0 1 : आलू–मक्का की अन्तःखेती में लागत–लाभ का तुलनात्मक विवरण (0.30 एकड़ खेत)

फसल	लागत के मद (रू0 में)						उत्पादन		लाभ	शुद्ध लाभ (रू0 में)
	बीज	सिंचाई	निराई–गुड़ाई	उर्वरक/कम्पोस्ट	खुदाई/तुड़ाई	कुल लागत		दर	कुल लाभ (रू0 में)	
आलू	1600	540	600	2550	2000	7290	40 कुन्तल	रू0 1200 प्रति कु0	40000	47500–10290= 37210
मक्का	1500				1500	3000	3000 भुट्टा	2.50	7500	
कुल						**10290**			**47500**	**37210**

निष्कर्ष

बुवाई के समय में बदलाव करने से आलू की उपज पर विशेष प्रभाव पड़ा। इसी प्रकार मक्का के बीजों को भिगाकर बुवाई करने से 3–4 दिनों के अन्दर जमाव हो गया, जिससे पौधों एवं फलों की बढ़त पर सकारात्मक असर पड़ा। उपरोक्त अन्तः खेती को अपनाकर छठिया देवी ने न केवल अपनी लागत कम की वरन् लाभ में अनुमान से अधिक की वृद्धि की, जिससे उनके आत्मविश्वास में वृद्धि हुई है। यह कहानी मात्र छठिया देवी की नहीं है, वरन् उनकी खेती एवं पैदावार की बढ़त को देखकर गाँव एवं अन्य आस–पास के गाँवों के बहुत से किसान अन्तः खेती में इन छोटे–छोटे नवाचारों को अपनाकर अपनी फसलों की उपज एवं आमदनी को बढ़ा रहे हैं और अपनी एवं अपने परिवार की आजीविका व रहन–सहन को सुदृढ़ कर रहे हैं। जरूरत है तो ऐसे प्रयासों को बड़े पैमाने पर प्रसारित करने की ताकि एक बड़ा खेतिहर समुदाय इससे लाभान्वित हो सके।

■

अर्चना श्रीवास्तव, अजय कुमार सिंह एवं रामसूरत
डी०एस०टी० कोर सपोर्ट परियोजना
गोरखपुर एनवायरन्मेन्टल एक्शन ग्रुप,
गोरखपुर

वृक्ष आधारित खेती प्रणाली एक दृश्य

हरित भारत के लिए हरित उत्सव

एम.एन. कुलकर्णी

हसीरूहब्बा जैसे पौधरोपण उत्सवों का आयोजन करने के माध्यम से सामुदायिक सहयोग के साथ पौधरोपण की संस्कृति को ग्रामीण जीवन शैली में समाहित किया जाता है।

हर साल पूरे विश्व में विभिन्न मुद्दों के लिए मनाये जाने वाले 123 विशिष्ट दिनों में पृथ्वी पर मृदा और पौधों के जीवन की रक्षा करने के लिए तीन दिन सुरक्षित हैं – विश्व वन्य दिवस (21 मार्च), विश्व पृथ्वी दिवस (22 अप्रैल) एवं विश्व पर्यावरण दिवस (5 जून)। इन अवसरों को एक उत्सव के रूप में मनाने के अलावा पौधों और मानव जीवन के लिए उनके लाभों के ऊपर आम जनमानस के बीच कोई चर्चा नहीं की जाती है।

पेड़ लगाना सभी नागरिकों का कर्त्तव्य है, क्योंकि सभी को स्वस्थ रहने के लिए स्वच्छ हवा एवं पर्यावरण की आवश्यकता है। हालांकि लोग विश्व पर्यावरण दिवस जैसे अवसरों पर सिर्फ पौध लगाने तक ही अपनी जिम्मेदारी समझते हैं। यह पौधे ही हैं जो पूरी पृथ्वी पर रहने वाले जीवों को भोजन उपलब्ध कराते हैं, यह पौधे ही हैं जो हानिकारक गैसों को अपने अन्दर समाहित करते हैं और हवा को स्वच्छ बनाते हैं। एक देश में कम से कम 33 प्रतिशत भूमि पर वनाच्छादन होना चाहिए। लेकिन, हालिया शोधों के अनुसार, भारत में वनाच्छादित क्षेत्र 20 प्रतिशत से भी कम है। इसलिए पेड़ लगाना एवं उनकी सुरक्षा करना अधिक महत्वपूर्ण है।

हसीरू हब्बा, हरित उत्सव

वाटरशेड विकास, कृषि–वानिकी, कृषि– औद्यानिक आदि तमाम वृक्ष आधारित विकास कार्यक्रमों पर तीन दशकों तक काम करने के बाद बाएफ इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि पौधों / वृक्षों के रोपण को खेतिहर समुदायों एवं आम जन के जीवन का एक हिस्सा बनाना होगा। सामुदायिक

सहभागिता के साथ पौधरोपण को उनके जीवन शैली में समाहित करना ही एक रास्ता है और इसे गाँवों एवं शहरों में अन्य उत्सवों की तरह एक उत्सव के तौर पर मनाया जाना चाहिए।

ग्रामीण समुदायों को शामिल करते हुए वृक्षारोपण को बड़े पैमाने पर लोकप्रिय बनाने के क्रम में, कर्नाटक स्थित स्थाई आजीविका और विकास के लिए कार्य कर रहे संगठन बाएफ ने अपने सभी परियोजना आच्छादित क्षेत्रों में हसीरूहब्बा– हरित उत्सव को लोकप्रिय बनाने का कार्य वर्ष 2001 से ही करना प्रारम्भ कर दिया है। पौधरोपण को धार्मिक स्वरूप प्रदान करने का एक प्रयास किया गया और गाँव के सभी वर्गों– धार्मिक मुखिया, राजनीतिज्ञ, सामाजिक कार्यकर्त्ता, सरकारी विभाग आदि के लोगों को शामिल करते हुए पौधरोपण को मान्यता दी गयी। आदि चुनचुनागिरी मठ के स्वर्गीय श्री बालगंगाधर नाथ स्वामी जी, टोंटाडरया मठ के स्व0 श्री सिद्धालिंगेश्वर स्वामी जी, डम्बल, स्थानीय विधायक, पर्यावरणविद् एवं राजनेताओं आदि ने इस आयोजित उत्सव में भाग लिया और वृक्षारोपण एवं उनकी सुरक्षा के महत्व आदि के बारे में समुदाय को बताते हुए उन्हें इसके लिए उत्प्रेरित किया। अन्य दूसरे स्वैच्छिक संगठन, किसान समूह, स्वयं सहायता समूह एवं ग्राम स्तरीय संगठनों ने इस अवधारणा को दुहराया।

सामान्यतः जून–जुलाई महीनों के दौरान, समुदाय के साथ विचार–विमर्श कर हसीरूहब्बा के लिए एक तिथि निर्धारित की गयी है। परियोजना से जुड़े हुए आस–पास के गाँवों के लोग, स्कूली बच्चे, जन प्रतिनिधि एवं धार्मिक नेताओं को इस उत्सव में सहभाग करने हेतु आमंत्रित किया जाता है। पौधरोपण हेतु नर्सरी, तेजी से बढ़ने वाले पौधों के बीजों की ढुलाई, चयनित भूमि में गढ्ढों की खुदाई एवं अन्य व्यवस्थाएं आदि एक दिन पहले ही सुनिश्चित कर ली जायेंगी। उत्सव वाले दिन सुबह समुदाय के लोग एक जगह एकत्र होते हैं और जुलूस के रूप में पौधरोपण वाले क्षेत्र में जाते हैं, नर्सरी की पूजा करते हैं और पौधरोपण से पूर्व हसीरूहब्बा की शपथ लेते हैं (देखें बाक्स 1)।

बाक्स 1 – हसीरूहब्बा शपथ

"वृक्ष कृषि का एक अभिन्न अंग होते हैं। हम, ग्रामवासी, ग्रामदेवी के नाम से शपथ लेते हैं कि हम अपने गाँव में प्रत्येक वर्ष हसीरूहब्बा का उत्सव मनायेंगे और जहाँ तक संभव हो, सामुदायिक सहयोग से पौधों को लगायेंगे एवं उनका संरक्षण करेंगे। हम इस हब्बा में अपने परिवार के सभी सदस्यों, रिश्तेदारों, मित्रों एवं आस–पास के गाँववासियों को भी शामिल करेंगे।"

विविध प्रजातियां एवं उनके प्रभाव

स्कूल परिसर और शैक्षणिक संस्थानों के आस–पास नीम का पेड़ लगाने से बीमारियों के रोक–थाम में मदद मिलेगी। कस्बों और शहरों में कदम्ब, बीलवारा तथा शिरीष के पौधे लगाने से वायु प्रदूषण के नियंत्रण में सहायता मिलेगी। चम्पा, चमेली और परिजात के पौधों को कूड़े–कचरे के ढेर तथा जल निकासी वाले स्थानों पर लगाने से इन स्थानों से निकलने वाली दुर्गन्ध को दूर किया जाता है। पीपल, गुलर, बरगद आदि वृक्षों के अन्दर वायु को स्वच्छ करने की क्षमता होती है इसलिए इन पौधों को पार्क और मन्दिर के परिसर में लगाया जा सकता है। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा किये गये एक अध्ययन के अनुसार, कस्बों और शहरों में पतंग, शीशम, अमरूद और शिरीष के पौधे लगाने चाहिए, क्योंकि ये पौधे वायु प्रदूषण रोधी पौधे होते हैं।

कर्नाटक के मलयन हल्ली गाँव हसीरूहब्बा का उद्घाटन

खेत के चारों तरफ पेड़ों व वनस्पतियों से की गयी घेराबन्दी से कार्बन उत्सर्जन को कम करने में मदद मिलती है और इस प्रकार यह जलवायु परिवर्तन के विरूद्ध शमन की गतिविधि के तौर पर काम करता है। बरसात के मौसम में गिरिपुष्प, पंगरा, राईमुनिया या धनेरी आदि के पौधों की कटिंग करके उनका रोपण करते हुए बगीचों के चारों तरफ तथा खेत की मेड़ों पर पौधों/वनस्पतियों से घेराबन्दी तैयार की जा सकती है। इसके साथ ही तेजी से उगने वाले पौधे जैसे– अगस्त्य, बबूल एवं गिरिपुष्प के बीजों की बुवाई भी चारों तरफ मेड़ पर की जा सकती है। यह जल्द ही तैयार हो जायेगा। दूसरे वर्ष से लगातार, पौधों से तैयार चहारदीवारी से बड़ी मात्रा में बायोमॉस की उपलब्धता होने लगती है, जिसका उपयोग खाद बनाने में किया जा सकता है।। एक समय बीतने के बाद, चारों तरफ मेड़ पर स्थानीय प्रजातियां उगनी प्रारम्भ हो जाती है।

गिरिपुष्प, सुबबूल, पंगरा एवं अगस्त्य तेजी से उगने वाली प्रजातियां हैं और बरसात के दिनों में इनके बीजों की सीधे बुवाई की जा सकती है। इनसे एक तरफ चारा की आवश्यकता की पूर्ति होती है साथ ही बायोमॉस भी मिलता है, जिसे मृदा में समाहित किया जा सकता है। किसानों द्वारा इस कम लागत अभ्यास को अपनाने हेतु बीजों एवं उत्प्रेरणा की आवश्यकता है।

फोटो : लेखक

हसीरूहब्बा के दौरान पौधारोपण करते समुदाय के लोग

कर्नाटक राज्य जैव ईंधन विकास बोर्ड के माध्यम से कर्नाटक सरकार निजी और सरकारी भूमियों पर जैव ईंधन प्रजातियों को भी बढ़ावा दे रही है। हसीरू हन्नू एवं बराडू बांगरा परियोजनाओं के माध्यम से किसानों को कुछ प्रजातियों जैसे– करंज, सिमरौबा, जेट्रोफा, महुआ आदि के बीज उपलब्ध कराये गये। किसानों को इसे खेत के चारों तरफ मेड़ों पर तथा अकृषित भूमि पर लगाने हेतु उत्प्रेरित किया जा सकता है। बीज उत्पादन के अलावा, इनसे बड़ी मात्रा में बायोमॉस तथा कूड़े के रूप में गिरे पत्ते प्राप्त होंगे। इसे खाद के रूप में बदल कर इसका प्रयोग खेतों में किया जा सकता है, जिससे जलवायु परिवर्तन के सन्दर्भ में रसायनिक खादों एवं कीटनाशकों का प्रयोग कम से कम होगा।

पहुँच का विस्तार

सार्वजनिक भूमियों, स्कूल के प्रांगण, मन्दिर के प्रांगण, उसर भूमि, सड़क के दोनों किनारों आदि पर पौधरोपण करते हुए वृक्षारोपण को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है। इसे समुदाय की संस्कृति में समाहित करने की आवश्यकता है परन्तु जोर–जबरदस्ती से नहीं। इसके लिए सशक्त सामुदायिक उत्प्रेरणा की आवश्यकता है। गाँवों में, स्वयं सहायता समूहों, युवा क्लबों, स्कूल के बच्चों आदि को शामिल करते हुए एक स्थाई पौधरोपण गतिविधियों में लम्बा रास्ता तय किया जायेगा।

सूखा क्षेत्रों के किसानों को कृषि–वानिकी एवं वृक्ष आधारित कृषिगत प्रणाली को अपनाने हेतु सहयोग करने की आवश्यकता है। स्थान की उपलब्धता पर निर्भर होने के बाद भी कम से कम एक अथवा दो पौधों का रोपण अपने घर के पिछवाड़े करना चाहिए। किसी भी सरकारी योजनाओं का लाभ उठाने के लिए कम से कम 200–300 पौधों का रोपण करना अनिवार्य किया जाना चाहिए। अन्ततः यह पेड़ ही हैं, जो वायुमण्डल से कार्बन का अवशोषण करते हैं और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने में मदद करते हैं। ▪

एम एन कुलकर्णी
अतिरिक्त मुख्य कार्यक्रम अधिकारी
बाएफ
कोनुरू, लक्ष्मैया गली, मोगलाराजपुरम
विजयवाड़ा, आन्ध्र प्रदेश
ईमेल : mnkulkarni65@gmail.com

Save the planet
LEISA INDIA, Vol. 21, No.4, December 2019